कहानियाँ आख़िर करती क्या हैं ?

अनिल सिंह

कहानियाँ सदियों से सामाजिक-सांस्कृतिक व्यवहार का हिस्सा रही हैं। अब ये सीखने-सिखाने की प्रक्रिया का एक अभिन्न हिस्सा हैं। औपचारिक-अनौपचारिक शिक्षण में कहानियों के इस्तेमाल को लेकर बहुतेरे प्रयोग होते रहते हैं। प्रस्तुत आलेख में कहानियों के मनो-सामाजिक प्रतिफल के साथ ही शैक्षिक उपक्रम के सन्दर्भ में उनका अनुभवजन्य विश्लेषण किया गया है। बच्चों के साथ कक्षा में किए गए काम के तीन उदाहरणों के माध्यम से ये पूरा ब्योरा रखा गया है। सं.

कहानियाँ आख़िर हैं क्या? वो करती क्या हैं? क्यों वो हमारी संस्कृति-परम्परा का ख़ास हिस्सा रहीं और अब औपचारिक शिक्षण का भी अभिन्न हिस्सा हैं। इस आलेख में हम इन्हीं कुछ बातों की चर्चा करने वाले हैं। साक्षरता के सीमित उद्देश्य से बाहर निकलकर जब तक हम कहानियों और उनके द्वारा रचे जाने वाले संसार को समझेंगे नहीं तब तक हम इनकी महत्ता और उपयोगिता को भी ठीक ढंग से नहीं समझ पाएँगे।

कहानी मानव मात्र की मनो-सामाजिक और बौद्धिक ज़रूरत है। यह दो सतहों पर काम करती है। पहली पर इसकी यथार्थ, भौतिक और वास्तविक जीवन सतह होती है। इसमें जो जैसा दिखता है उसकी स्मृति, समझ और प्रतिक्रिया उसी अनुरूप बनती है। यह प्रत्यक्ष घटित होता है और अकसर तत्काल होता है।

दूसरी सतह पर ज्ञान निर्माण का उद्यम होता है। इस दौरान विभिन्न स्मृतियों, अनुभवों, तर्कों को मिलाकर, कल्पना को आधार देकर नए ज्ञान, अनुभव और तर्क का निर्माण होने की सम्भावना होती है। दरअसल ज्ञान निर्माण की यह जो स्वतःस्फूर्त प्रक्रिया या उद्यम है उसके अवसर बनाने, उसे प्रेरित करने, उद्दीप्त करने, और इस्तेमाल होने तक की कगार पर पहुँचाने की ज़रूरत होती है। इस तरह के उद्दीपन और प्रेरण में कहानियों की बड़ी अहम भूमिका होती है।

मुझे लगता है कहानी की ज़रूरत और उसके काम को हम नीचे लिखे तीन प्रमुख आयामों में समझ सकते हैं :

शिक्षणशास्त्रीय (Pedagogical) ज़रूरत

पढ़ने-लिखने का आधार बनाए जाने के रूप में कहानियों का इस्तेमाल बहुतायत में किया जाता है। पुस्तकों और कहानियों में एक अनदेखे संसार का ख़ज़ाना है, यह समझ में आते ही बच्चे इसकी ओर आकृष्ट होते हैं। इसके रंग, चित्र और मज़ेदारी के साथ-साथ घटनाओं की नाटकीयता इसे और आकर्षक बनाते हैं। इस ख़ज़ाने की चाबी की तलाश और इसकी चाह में वे पढ़ने जैसे कौशल को हासिल कर पाते हैं। भाषा की बनावट, शब्दों की ध्वनियाँ और शब्दों की पहचान के रास्ते भी यहीं से खुलने लगते हैं।

समाजशास्त्रीय (Sociological) ज़रूरत

कहानियाँ इंसानी ज़रूरत हैं। हमारी संस्कृति और परम्परा का हिस्सा हैं और सामाजिक चेतना की ख़ुराक भी हैं। लोगों से जुड़ाव बनाने, अलग-अलग समाज-समुदाय और उनकी जीवन परिस्थितियों के बारे में सरोकार और सामाजिक चेतना के विस्तार के लिए इनकी अहम ज़रूरत है। कहानियाँ समाज का ही प्रतिबिम्ब हैं। इस तरह कहानियों को समझना समाज को समझना भी है। स्वतंत्र रूप से ख़ुद की स्थिति और दूसरों के बरक्स अपनी स्थिति के सिरे खोलती हैं कहानियाँ।

विकासात्मक (Developmental) ज़रूरत

दरअसल यही वह क्षेत्र है जिसमें कहानी अपना असल काम करती है। विकास के इस क्षेत्र में कहानियों की ज़रूरत को हम चार आयामों में समझेंगे :

एजेंसी का विकास : कहानी हमारी चेतना, हमारी बुद्धि-विवेक, सक्रियता और पहल के उपयोग होने व उसे आगे बढ़ाने का अद्वितीय काम करती है। हम सबमें जो हमारी क्षमता-सम्भावना निहित है उसे सक्रिय करने, उनके इस्तेमाल होने के अवसर बनाती हैं कहानियाँ। कहानियाँ एक ऐसा उद्वेलन शुरू करती हैं जिसमें चेतना अपने मौलिक स्वरूप में उसकी उच्चतम सम्भावनाओं तक जाने की कोशिश करती है। समाधान ढूँढ़ने, निर्णय लेने, राय बनाने, भागीदार होने, महसूस करने, पात्र और स्थितियों के साथ तादात्म्य बनाने जैसे महत्त्वपूर्ण विकासात्मक उद्देश्यों को पूरा करती हैं कहानियाँ।

साहित्य में रुचि : कहानियाँ एक और बहुत ही महत्त्वपूर्ण काम करती हैं, और वह है साहित्य में रुचि पैदा करना। एक ऐसा व्यक्ति गढ़ना जो साहित्य का रस ले पाता है। साहित्य के माध्यम से संसार को जानने समझने का और उसे जीवन का हिस्सा बना लेने का माद्दा रखता है। कहानियाँ एक ऐसा व्यक्ति बनाने का अभूतपूर्व काम करती हैं जो साहित्य में ख़ुद को और जीवन सन्दर्भों को तलाशने और देखने की दृष्टि रख पाता है। कहानियों को जीवन मानकर उनपर भरोसा करना सीखता है, और इस तरह साहित्य का सौन्दर्य देख पाता है।

सोच समझ का विस्तार : कहानियों का संसार हमारी सोच समझ का विस्तार करता है। उसके अलग-अलग पात्र, जीवन परिस्थितियाँ और उसमें संघर्ष, सामंजस्य व समाधान की विविधता व्यक्ति के विकास क्रम में उसकी दृष्टि को विस्तार देती है। कहानियाँ निर्णय, हाज़िर-जवाबी, तालमेल, विवेक, तर्क बुद्धि, भावनाओं, पारस्परिकता, जीवन सौन्दर्य जैसी समझ को विभिन्न धरातलों पर विकसित होने के अनन्त अवसर बनाती चलती हैं।

कल्पना शक्ति : विकास के इस आयाम में कहानियाँ, अपने रचना संसार की बदौलत कल्पना शक्ति को उसके चरम तक पहुँचाने का काम करती हैं। कहानी को सच मानकर उससे जुड़ पाने का रसायन पैदा करती हैं। एक ऐसा पात्र जिससे जीवन में कभी भी मिलना न होगा, ऐसी जीवन परिस्थिति जो न कभी घटित हुई है और न होने की सम्भावना है, आपसी सम्बन्ध और भावनाएँ ये सब कुछ कल्पना के बूते ही साकार हो पाते हैं। कहानियाँ इस कल्पना शक्ति को निरन्तर माँजती और निखारती हैं। खोज, आविष्कार, रचना और सृजन, सब इसी कल्पना शक्ति के ईंधन पर पलते और बढ़ते हैं।

अगर कहानी के द्वारा किए जाने वाले इन कामों और उनके असर पर ग़ौर करें तो हम पाते हैं कि कहानियाँ शिक्षा के व्यापक लक्ष्यों को पूरा करती हैं। और शायद इसीलिए सदियों से ये हमारी संस्कृति-परम्परा का हिस्सा रही आई हैं। इनके बग़ैर हम शिक्षा की कल्पना नहीं कर सकते।

कहानियाँ और संवाद

कहानियों के साथ संवाद का होना सोने में सुहागे की तरह है। कहानियाँ अकेले जो

काम करती हैं वह संवाद के साथ कई गुना चमत्कारी हो सकता है। कहानियाँ किताब में से पढ़कर सुनाई जा रही हों, मौखिक रूप से याद करके सुनाई जा रही हों या सुनाते हुए ही गढ़ी जा रही हों, कहानियों का उद्देश्य पूरा करने और उसका प्रभाव बढ़ाने के लिए उसके साथ संवाद की एक सुनियोजित, सतर्क और स्वाभाविक प्रक्रिया बहुत ज़रूरी है। यह संवाद कई बार कहानियों के साथ जन्मता है और कई बार पूर्व नियोजित हो सकता है। लेकिन दोनों ही तरह की स्थितियों में इसकी लय और गति कहानी के सुसंगत होनी चाहिए। आदान-प्रदान होना चाहिए, कही गई बात पर भरोसा होना चाहिए और सुनने व सुनाने वाले की बीच एक जीवन्त सम्पर्क बना रहना चाहिए।

कुछ उदाहरणों के माध्यम से हम कहानियों के इन कार्यों और प्रभाव को समझने की कोशिश करेंगे। ये सारे उदाहरण, मेरी अपनी भाषा की कक्षाओं के अनुभव हैं। इन कक्षाओं में अलग-अलग समय पर ढाई-तीन साल से लेकर दस साल तक के बच्चे-बच्चियाँ शामिल रहे हैं।

उदाहरण एक

'चिंटू और जंगल की कहानी' बच्चों की फ़रमाइश पर पैदा हुई एक कहानी है जो बस धीरे-धीरे बढ़ती जाती है। यह कहानी पाँच साल के चिंटू की है जो जंगल घूमने का बहुत शौक़ीन है। हर रोज़ स्कूल से लौटकर आने के बाद, बस्ता फेंककर, अपना जंगल वाला थैला लेकर जंगल भाग जाता है और फिर जंगल में इधर-उधर घूमता फिरता है। इस कहानी के मार्फ़त बच्चे चिंटू के साथ पूरा जंगल घूमते हैं, उसके रोमांच में सहभागी होते हैं। स्कूल का बस्ता फेंककर, जंगल वाला थैला लेकर जंगल भाग जाना और वहाँ मनमाफ़िक घूमना-फिरना, अलग-अलग जानवरों से मुठभेड़, उनसे अलग-अलग युक्तियों से निपटना, किसी को दोस्त बनाना, किसी से मदद लेना, किसी की सवारी करना और किसी से जान बचाकर भागना, उन्हें उस काल्पनिक संसार में पूरी तरह से रमा देता है। ठीक उसी समय यह इस वास्तविक जटिल दुनिया में अपने अस्तित्व को देखने और बनाए रखने का ज़रिया भी बन रहा होता है। जैसे—

एक बार कहानी के दौरान स्थिति कुछ यूँ बनी कि चिंटू एक पेड़ पर चढ़ा बैठा है, क्योंकि नीचे शेर नज़रें गड़ाए बैठा है। पूरी रात गुज़र गई और अब सवेरा होने को था, पर शेर टस-से-मस न हुआ। चिंटू ने सोचा था शेर पानी पीने तो जाएगा ही, तब मौक़ा पाकर वो खिसक लेगा। पर शेर ने भी जैसे ज़िद ठान रखी थी कि आज तो वह चिंटू को चट करके ही दम लेगा। कहानी सुनाते हुए मैंने ब्लैकबोर्ड पर सारा दृश्य बयाँ कर दिया। पेड़, पेड़ की शाख पर बैठा चिंटू, नीचे शेर और घास-फूस। बोर्ड पर बने चित्र को देखते हुए छः साल के हर्ष ने कहा,

"शेर का चेहरा ऊपर की तरफ़ देखता हुआ बनाओ, क्योंकि शेर तो ऊपर की तरफ़ ही देख रहा होगा न।"



चित्र : अनिल सिंह

मैंने कोशिश करके बना दिया। अब सबकी जान साँसत में थी कि क्या होगा। मैंने भी मौक़े को भाँपा और कहानी को आगे बढ़ाने की बजाय यहीं अटका दिया।

मैंने कहा, "अब क्या होगा? कोई उपाय सोचना होगा जिससे चिंटू बच पाए।"



चित्र : अनिल सिंह

मैंने कहा, "हाँ, ये तो बढ़िया आइडिया है। चलो कुछ और सोचते हैं,"

कहकर मैंने कुछ और उपाय कुरेदने चाहे। अब छः साल की जन्नत की बारी थी, उसने कहा,

"आप एक शेरनी बना दीजिए। शेर, शेरनी के साथ गुफा में जाएगा और कुछ वक़्त बिताएगा, इतने में मौक़ा पाकर चिंटू पेड़ से उतरकर भाग जाएगा।"

बच्चों के समूह ने, जिसमें साढ़े तीन साल के अबीर के साथ 6 साल की जन्नत शामिल थी, कमाल के सुझाव दिए। उनमें से तीन की चर्चा कर शायद हम कहानी के असर और उसमें बच्चों की शामिलियत को समझ सकें। सवाल के जवाब में बिना देर लगाए चार साल के अर्णव ने कहा,

"आप बन्दूक लिए एक शिकारी इस तरफ़ बना दीजिए, शेर उसे देखते ही जंगल के अन्दर भाग जाएगा और चिंटू उतरकर घर भाग आएगा।"

साढ़े तीन साल के अबीर और तीन साल के शिवा ने भी इसे जायज़ ठहराया। यह भी कुछ कम आइडिया न था। भई, जब सब कुछ ब्लैकबोर्ड में ही हो रहा है तो यह क्यों नहीं हो सकता। मैंने ऐसा ही किया। बन्दूक लिए एक शिकारी बना दिया। पर शेर गया नहीं। मैंने फिर कहा कि शेर तो गया ही नहीं अब क्या किया जाए। इस सवाल के जवाब में पाँच साल के अंश ने तपाक से कहा,

"आप शेर का चित्र मिटा दो, चिंटू चुपचाप उतरकर घर चला जाएगा।"

दो-एक बच्चों ने भी इस उपाय से अपनी सहमति जताई। बात भी सही थी। मैंने ही तो यह विकट स्थिति खड़ी की थी पेड़ के नीचे शेर बनाकर, और मैं ही इस स्थिति से छुटकारा दिला सकता था, शेर को ब्लैकबोर्ड से मिटाकर। बराबर का तर्क था।

'वक़्त बिताएगा' का प्रयोग उसने दुनिया में आमतौर पर होने वाले प्रयोग की तरह ही किया लेकिन उसकी प्लेसिंग और भाव को उसने अपनी सहज समझ और निर्विवाद तर्क बुद्धि के साथ किया। कहानी का आनन्द, संकट और चिन्ता का मौलिक भाव और उपाय की रचनात्मकता व तार्किकता, सब कुछ अपने उच्चतम स्तर पर। ये बचकानी बातें तो कतई न थीं। यह कहानी का चमत्कार था। बच्चे बता रहे थे, क्योंकि कोई उन्हें सुन रहा है, कोई उनसे पूछ रहा है। कहानी के भीतर जाने और उसमें शामिल हो जाने की सम्भावनाएँ बनी हैं। उनके बताए उपाय पर सारी स्थिति टिकी हुई है। उनपर बड़ी ज़िम्मेदारी है कि इस वक़्त वे एक ऐसी बात बोल सकते हैं जो पूरा नज़ारा ही बदल दे। बच्चों के इन तर्कों को विवेचना की किसी भी कसौटी पर ख़रा ही पाया जाएगा। और कहानी अपना पूरा काम करती हुई दिखाई देती है।



चित्र : अनिल सिंह



चित्र : अनिल सिंह

उदाहरण दो

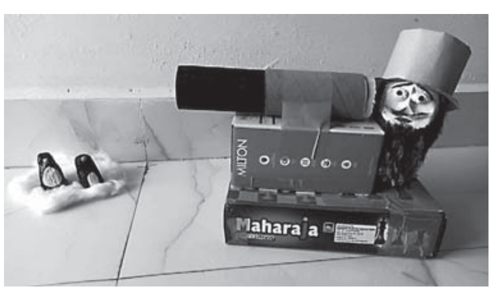
दूसरी घटना पेंगुइन की कहानी की है। इस कहानी में पेंगुइन के बच्चे खेलते-खेलते दूर समुन्दर में निकल जाते हैं। समुद्री शिकारी अकसर उन्हें पकड़ लेता है। ये और बात है कि कभी कछुआ तो कभी मछली आकर उन्हें बचा लेते हैं और घर पहुँचा देते हैं। पेंगुइन का नाम सुनते ही बच्चे पेंगुइन के बारे में और जानना चाहते थे। हमने कम्प्यूटर में खोजबीन की, तस्वीरें देखीं और कुछ वीडियो भी। फिर बातें शुरू हो गईं। पेंगुइन बर्फ़ीले इलाक़े में रहते हैं। और यह धरती का एक ख़ास हिस्सा है जहाँ बर्फ़ ही बर्फ़ है। यह फ्रिज में मिलने वाली और ठेले पर मिलने वाली बर्फ़ की ही तरह है लेकिन यह पूरा का पूरा इलाक़ा ही बर्फ़ है, यह किसी का घर है। पेंगुइन यहीं रह सकती है। उसे हम अपने घर लाकर पाल नहीं सकते। वह चिड़ियाघर में भी नहीं मिलती। वह चलती भी है और तैरती भी है।

मिट्टी के खिलौने बनाने की एक गतिविधि के दौरान हमने छोटे और बड़े पेंगुइन बनाए थे और उन्हें रँगा था। कहानी सुनाने के दौरान मैंने उन्हीं खिलौनों का इस्तेमाल किया। पेपर कप और पेपर प्लेट का एक कछुआ लिया, जूते के डिब्बे से एक शिप बनाई, एक पुराने कैलिडोस्कोप से दूरबीन बनाई, एक मुखौटा था जिसपर काले रंग के ऊन लगाकर बाल बनाए थे, यह हमारा शिकारी था, ख़ाली माचिस की डिब्बी और धागे की गिट्टी के ख़ाली रोल से बन्दूक बनाई गई थी। पुरानी फटी मच्छरदानी का एक बड़ा टुकड़ा जाल था। यह सब कहानी में इस्तेमाल होने वाली प्रॉपर्टी थी।

अकसर पेंगुइन के बच्चों की तलाश में शिकारी अपनी शिप में दूरबीन और बन्दूक रखके समुन्दर में आता था। पेंगुइन के बच्चे शिकारी की शिप देखते ही किनारों की ओर भागते थे। कहानी सुनते हुए और यह दृश्य देखते हुए बच्चे भी उसी तरह का डर और बेचैनी महसूस कर रहे थे। वे चाहते थे कि किसी भी तरह जल्दी से पेंगुइन के बच्चे किनारे पहुँच जाएँ और माँ-बाप के पास सुरक्षित हो जाएँ या फिर कोई कछुआ या मछली दोस्त आकर उन्हें किनारे ले जाए। मुखौटे से बनाया गया शिकारी बहुत ही ख़ौफ़नाक था। अगले दिन कहानी के अगले हिस्से में जब पेंगुइन के बच्चे खेलते-खेलते समुन्दर में दूर निकल गए, और मैं शिकारी को लाने की तैयारी में था तो चार साल के अबीर ने ज़ोर देकर कहा,

"शिकारी को मत लाना, बच्चे अभी खेलकर घर वापस आ जाएँगे, वह लगभग रुआँसा-सा था।"

उसकी बात में दृढ़ता थी और एक सहज संवेदना भी, कि कहानी ही सही, पर ये शिकारी के ख़ौफ़ वाला हिस्सा क्या डिलीट नहीं किया



चित्र : अनिल सिंह

जा सकता? क्यों किसी कहानी को सनसनीखेज़ बनाने के लिए पेंगुइन के बच्चों की जान जोखिम में डालने की ज़रूरत पड़ती है? एक धरातल कहानी का था और दूसरा विचार का। अबीर दोनों धरातलों पर बराबरी से खड़ा था। दूसरे बच्चे भी यही चाहते थे। सिर्फ़ एक बच्चा था जो चाहता था कि शिकारी को लाया जाए। वह शायद उस ख़ौफ़ में भी मज़ा ले रहा था। मुझे बच्चों की यह बात जँची और मैंने तय किया कि कहानी में अब शिकारी कभी नहीं आएगा। उसकी जगह मैं अख़बार से बनी नाव में ओरिगेमी पेपर का बना एक नाविक लेकर आया, जिसके आते ही बच्चों ने उसे 'बोट वाले अंकल' नाम दे दिया। मुझे समझ में आया कि यह सोचा-समझा यत्न था। 'बोट वाले अंकल' कहकर एक तरह से उन्होंने उस पात्र को पेंगुइन के बच्चों के पक्ष में, या यूँ कहें कि अपने पक्ष में कर लिया था। और एक तरह से कहानी का भविष्य तय कर दिया था।

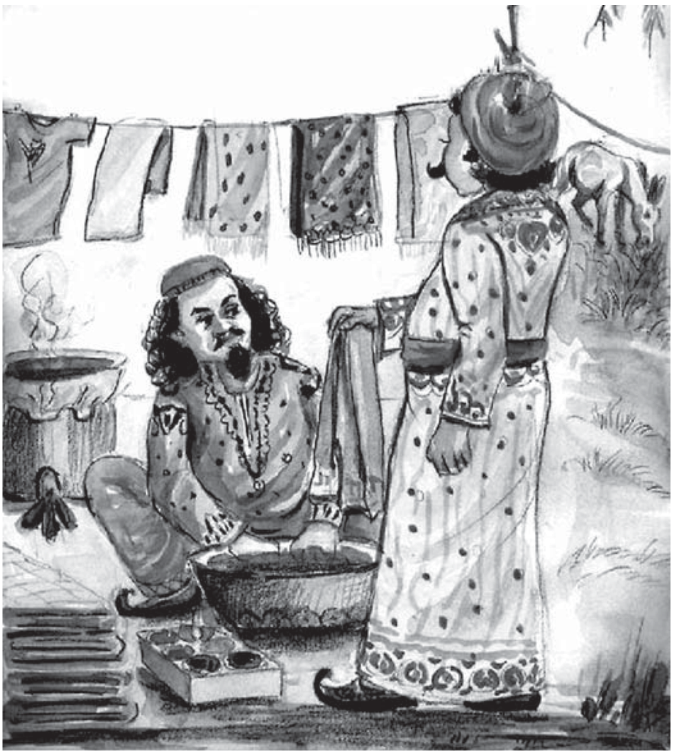
कहानियाँ बच्चों को इस तरह अपनी गिरफ़्त में लेती हैं और उनकी चेतना को उद्दीप्त करती हैं। कहानी से जुड़कर बच्चे उसमें अपनी बात कहते हैं और पूरेपन से कहते हैं बशर्ते उन्हें भरोसा हो कि उनकी बातें 'बच्चों की बात' मानकर उड़ा नहीं दी जाएँगी। बच्चे अपनी बात तब भी कहते हैं जब वे देख पा रहे हों कि बड़े भी उसी कड़ी में अपनी बातें रख रहे हैं।

उदाहरण तीन

रिमझिम भाग 3 में 'कब आऊँ' एक रोचक पाठ है जिसमें रँगाई का काम करने वाले एक कामगार की तर्क बुद्धि और हाज़िर-जवाबी की बात है।

पाठ के ज़रिए बच्चों के बीच इस कहानी को शुरू करते समय थोड़ा संशय ज़रूर था कि बच्चों को यह कहानी रुचेगी या नहीं। कई बार किसी कहानी को लेकर बच्चों की नापसन्दगी एकदम से ज़ाहिर हो जाती है और कभी आप उसे कहानी के दौरान भाँप पाते हैं। जब मैंने कहा कि आज हम अवंती की कहानी सुनने वाले हैं तो किताब पर नज़र डालते बच्चों को भी लग रहा था कि इसमें कोई मज़ा नहीं आने वाला। कहानी भी छोटी है और चित्र भी एक ही है।

कहानी रँगाई करने वाले एक व्यक्ति 'अवंती' के साथ हुई एक घटना पर आधारित थी। कहानी की शुरुआत में ही रँगाई करने वाले के नाम पर थोड़ी मज़ेदार चर्चा हो ही गई। 'अवंती' उन्हें लड़की का नाम लगा। एक ने तो पूछ ही लिया, अवंती लड़की है या लड़का। मैंने कहा, तुम्हें क्या लगता है। उन्होंने कहा, नाम तो लड़की का है, पर कहानी में ये लड़का है। मैंने पूछा, ये नाम लड़की का क्यों है? एक ने कहा,



भोपाल में रानी अवंती बाई का चौराहा है। उसमें रानी घोड़े के ऊपर बैठी हुई हैं। किसी ने बताया बसंती भी लड़की का नाम होता है। आरती, गोमती, रोशनी, मालती के नाम के भी ज़िक्र हुए। फिर ये बात आई कि जैसे अवंती नाम लड़की का है पर कहानी में वह लड़के का नाम है ऐसे कुछ और नाम ढूँढ़ें। पर बच्चों का कहना था कि ये सब बातें बाद में, पहले कहानी आगे सुनाओ।

मैंने बताया कि अवंती गाँव में कपड़े रँगाई का काम करता था। रँगाई का काम करने वाले को रंगरेज़ भी कहते हैं। कुछ बच्चों को उससे 'अँगरेज़' की ध्वनि पकड़ में आई। तो बात थोड़ी अँगरेज़ों पर भी हो गई। अब बात इसपर आई कि पहले गाँवों में कपड़ों को रँगने का काम होता था। लोग कपड़े लेकर आते और मनचाहे रंग में रँगवाते थे। 'रंगा सियार' कहानी पहले हो चुकी थी इसलिए बच्चों के पास कपड़ों की रँगाई का एक सन्दर्भ तो था ही। बड़े-बड़े कड़ाहों में रंगों को घोलना और फिर उसमें कपड़ों को उबालना। ऐसे ही नीले रंग के एक कड़ाह में रात के अँधेरे में एक सियार गिर गया था और नीला हो गया था। बच्चों के लिए यह कनेक्शन बड़ा ही मज़ेदार रहा। किसी ने कहा, कपड़े तो सफ़ेद होते थे। दूसरे ने जोड़ा, हाँ, वो तो रुई से बनते हैं न, और रुई तो सफ़ेद रंग की होती है। मैंने बताया, रुई को कपास भी कहते हैं, कपास से पहले धागे बनाए जाते हैं उसे कताई कहते हैं, फिर धागों से कपड़ा बनता है। कपड़े बनाने के काम में 'जुलाहा' एक नाम आया जो बच्चों ने सुना ही नहीं था। उन्हें बताया कि बुनकर उसी का दूसरा नाम है जो हथकरघे पर कपड़ा बुनते हैं। कहानी की हर दूसरी लाइन में कोई न कोई सूत्र निकल ही आ रहा था जिससे एक नई दिशा में बात चली जाती और एक नई जानकारी हाथ लग रही थी। पर बच्चों को तो कहानी में ज़्यादा रुचि थी सो वे सब सूत्रों को छोड़ते जा रहे थे कि उन्हें फिर कभी समेटेंगे।

कहानी में एक सेठ अवंती को परेशान करने के मक़सद से उसकी दुकान पर आता है। सेठ को कपड़े का एक टुकड़ा रँगवाना होता है। जब अवंती पूछता है कि किस रंग में रंगवाना चाहते हैं तो सेठ कहता है, हरा, पीला, लाल, नारंगी, नीला, आसमानी, बैंगनी, काला और सफ़ेद रंग मुझे कतई अच्छे नहीं लगते। इन्हें छोड़कर किसी भी रंग में रंग दो।

बच्चों के लिए भी यह एक चुनौती की तरह था क्योंकि साफ़तौर पर वे अवंती की तरफ़ खड़े दिखाई दे रहे थे और सेठ के गिनाए रंगों से इतर रंग ढूँढ़ रहे थे। लगभग सभी ने एक-दो रंग सोचे, लेकिन वे जितने भी रंगों के नाम जानते थे वे सब तो सेठ ने गिना ही दिए थे। बच्चे कहानी में भी थे और कहानी के बाहर भी। उन्हें लग रहा था कि सेठ ने तो अवंती को मुश्किल में डाल दिया, अगर वे कोई रंग सोच पाते तो अवंती की मदद कर पाते। अब अवंती की कहानी सिर्फ़ एक कहानी नहीं थी एक ऐसी वास्तविक जीवन परिस्थिति बन गई थी जिसमें हर बच्चा अपने को शामिल पा रहा था और अपनी-अपनी तरह से समाधान सोचने में लगा हुआ था। एक अपरिचित और अंजान व्यक्ति, जो था भी और नहीं भी, जिससे कभी मिले भी नहीं और जिससे कभी मिलने की कोई सम्भावना भी नहीं, उसके लिए जिस जीवन्तता और सक्रियता से बच्चे सोच विचार में लगे थे, वह मेरे लिए अभूतपूर्व अनुभव था।

कहानी में तो अवंती सेठ का मंसूबा भाँप लेता है और कपड़ा ले लेता है। बच्चों के सामने प्रश्न था कि वह किस रंग में कपड़ा रंग कर देगा? जब पूछा कि क्या हुआ होगा तो एक बच्चे ने कहा कि कुछ दिन बाद अवंती ने सेठ को वो कपड़ा, बिना रँगे वैसे ही वापस कर दिया होगा। दूसरे ने कहा सब रंगों को मिलाकर कोई रंग बनाया होगा और उसमें सेठ का कपड़ा रँगा होगा। कुछ का कहना था कि सब रंगों को मिलाने से तो काला रंग बनेगा, क्योंकि काला रंग तो गहरा और तेज़ होता है। किसी ने कहा उसने कपड़ा वापस ही नहीं किया होगा।

कहानी में होता कुछ यूँ है कि सेठ जब पूछता है कि इसे लेने कब आऊँ, तो अवंती

कपड़े को अलमारी में बन्द कर उसमें ताला लगा देता है और कहता है कि सोमवार, मंगलवार, बुधवार, गुरुवार, शुक्रवार, शनिवार और रविवार को छोड़कर किसी भी दिन आ सकते हो। बच्चों को बड़ा मज़ा आया। पहली बार में तो वे हिसाब ही लगाने लगे कि कौन-सा दिन बचा। किसी ने कहा सोमवार, तो किसी ने कहा बुधवार। पर जब ध्यान से सुना और जाना तो उन्हें समझ में आया कि अवंती ने तो सप्ताह के सारे दिन ही गिना दिए थे। एक बच्ची ने अपनी उँगलियों में सातों दिन गिने और कहा, सेठ तो ज़ीरो दिन में आएगा। एक ने कहा, किसी दिन नहीं आएगा। मतलब कभी नहीं आएगा। एक बच्चे ने कहा, दीपावली के दिन तो आ ही सकता है। फिर किसी ने जोड़ा कि दीपावली के दिन भी कोई-न-कोई तो दिन होगा। वे आपस में ही सुलझते जा रहे थे। मैंने पूछा कि उसने कपड़े को अलमारी में रखकर ताला क्यों लगा दिया तो एक बच्चे ने बताया कि सेठ तो कभी लेने आने वाला नहीं इसलिए उसे कभी देना ही नहीं पड़ेगा।

अन्त में बच्चों को समझ में आ गया कि जिस तरह सेठ ने सारे रंग गिनाकर अवंती को परेशान किया उसी तरह अवंती ने सप्ताह के सारे दिन गिनाकर सेठ को परेशानी में डाल दिया। बच्चों ने कहा अवंती ने सेठ से बदला लिया। सेठ को भी समझ में आ गया कि अवंती ने उसकी बात का करारा जवाब दिया है।

बच्चे भावनात्मक रूप से पात्रों से जुड़ते हैं, उन स्थितियों की अपने सन्दर्भों में कल्पना करते हैं, किसी परिस्थिति में किसने क्या निर्णय लिया, और क्या निर्णय लिया जा सकता था इसकी पड़ताल करते हैं, अपने स्तर पर समाधान के रास्ते खोजते हैं और विविध जीवन सन्दर्भों से अपना तादात्म्य बिठाते हैं। कहानियाँ बच्चों के इन कौशलों को बढ़ाती हैं। उनके लिए दुनिया के नित नए दरवाज़े खोलती हैं और इंसानियत पर भरोसा मज़बूत करती हैं। कहानी हाड़-माँस का एक पुतला है जिसमें आप जान डाल सकते हैं। पाठ्यपुस्तकों की कहानियों में भी अपार सम्भावनाएँ होती हैं बाशर्त आप अकादमिक उद्देश्यों और उसकी खानापूरी में उलझकर न रह जाएँ। इसके अलावा, कहानियाँ अगर टाइम पास के लिए या काम चलाने के लिए इस्तेमाल की जाएँगी तो उनका ये कमाल देखने को कभी नहीं मिलेगा।

अनिल सिंह पिछले ढाई दशक से विभिन्न स्वैच्छिक संस्थाओं के साथ मिलकर सामाजिक विकास के कार्य में संलग्न रहे हैं। 15 सालों से प्रारम्भिक शिक्षा के क्षेत्र में कार्यरत हैं। जन संचार, समाज कार्य एवं शिक्षा शास्त्र की पढ़ाई की। वर्तमान में टाटा ट्रस्ट, पराग इनिशिएटिव के लाइब्रेरी एजुकेटर कोर्स में बतौर फ़ैकल्टी जुड़े हुए हैं।

सम्पर्क : bihuanandanil@gmail.com